ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2018; 4(1): 424-426
www.allresearchjournal.com
Received: 25-11-2017
Accepted: 27-12-2017

मीना कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय,
हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार,
भारत

Corresponding Author:
मीना कुमारी
शोधार्थी, विश्वविद्यालय,
हिन्दी–विभाग, ल.ना. मिथिला
विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार,
भारत

स्त्री–विमर्श की पृष्ठभूमि–निर्माण और महादेवी वर्मा की काव्य–रचनाएँ

मीना कुमारी

सारांशः
महादेवी वर्मा अपने समय की प्रथम रचनाकार हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री–जीवन के प्रश्नों को गंभीरता से उपस्थित किया। उनकी काव्य–रचनाओं के केन्द्र में तो स्त्री के अंतर्मन की अभिव्यक्ति है ही, अपनी गद्य रचनाओं में भी उन्होंने स्त्री–जीवन की विविध छवियों का अंकन किया है। 'शृंखला की कड़ियाँ' में प्रकाशित निबंधों में भारतीय नारी की समस्याओं पर गंभीर विमर्श है। अपनी इस पुस्तक को जन्म से अभिशप्त, जीवन में सन्तप्त, किन्तु अक्षय वात्सल्य– वरदानमयी भारतीय नारी को' समर्पित किया है।

प्रस्तावनाः
''भारतीय नारी भी जिस दिन अपने सम्पूर्ण प्राणप्रवेग से जाग सके उस दिन उसकी गति रोकना किसी के लिए संभव नहीं। उसके अधिकारों के सम्बन्ध में यह सत्य है कि वे भिक्षावृत्ति से न मिले हैं न मिलेंगे, क्योंकि उनकी स्थिति आदान–प्रदान–योग्य वस्तुओं से भिन्न है। समाज में व्यक्ति का सहयोग और विकास की दिशा में उसका अपयोग ही उसके अधिकार को निश्चित करता रहता है और इस प्रकार, हमारे अधिकार, हमारी शक्ति और विवेक के सापेक्ष रहेंगे।''(1) इन निबंधों में सदियों से बन्धन में जी रही भारतीय स्त्री के इन बंधनों में ही जीने एवं इन्हें अपनी नियति मान लेने की मानसिकता पर भी प्रहार है और उन्हें जगाने का प्रयास है।
भारतीय–स्त्री के अवचेतन–मानस में किस प्रकार पुरुष पर निर्भरता में ही उनकी आकांक्षा, उनके स्वप्न खो चुके हैं कि वे स्वयं अपने अस्तित्त्व से अनभिज्ञ हो चुकी है, इस पर विचार करती हुई वे लिखती हैं– ''इस समय समाज में केवल दो प्रकार की स्त्रियाँ मिलेंगी– एक वे जिन्हें इसका ज्ञान ही नहीं है कि वे भी एक विस्तृत मानव–समुदाय की सदस्य हैं और उनका भी एक ऐसा स्वतंत्र व्यक्तित्त्व है, जिसके विकास से ही समाज का उत्कर्ष और संकीर्णता से अपकर्ष संभव है; दूसरी वे जो पुरुषों की समता करने के लिए उन्हीं के दृष्टिकोण से संसार को देखने में, उन्हीं के गुणावगुणों का अनुकरण करने में जीवन की चरम लक्ष्य की प्राप्ति समझती हैं। सारांश यह कि एक ओर अर्थहीन अनुसरण है तो दूसरी ओर अनर्थमय अनुकरण और यह दोनों प्रयत्न समाज की शृंखला को शिथिल तथा व्यक्तिगत बंधनों को सुदृढ़ और संकुचित करते जा रहे हैं।''(2)
स्त्री और पुरुष एक–दूसरे के पूरक अवश्य हैं, परन्तु उनकी शारीरिक और मानसिक संरचना भिन्न हैं। ''नारी का मानसिक विकास पुरुषों के मानसिक विकास से भिन्न, परन्तु अधिक द्रुत, स्वभाव अधिक कोमल और प्रेम–घृणादि भाव अधिक तीव्र तथा स्थायी होते हैं। इन्हीं विशेषताओं के अनुसार उनका व्यक्तित्त्व विकास पाकर समाज के उन अभावों की पूर्ति करता है, जिनकी पूर्ति पुरुष–स्वभाव द्वारा संभव नहीं। इन दोनों प्रकृतियों में इतना ही अन्तर है, जितना विद्युत और झड़ी में। एक से शक्ति उत्पन्न की जा सकती है, बड़े–बड़े कार्य किये जा सकते हैं, परन्तु प्यास नहीं बुझाई जा सकती। दूसरी से शान्ति मिलती है, परन्तु पशुबल की उत्पत्ति संभव नहीं। दोनों के व्यक्तित्त्व, अपनी पूर्णता में समाज के एक ऐसे रिक्त स्थान को भर देते हैं, जिससे विभिन्न सामाजिक सम्बन्धों में सामंजस्य उत्पन्न होकर उन्हें पूर्ण कर देता है।''(3)
महादेवी वर्मा की स्त्री–चेतना को उनके उक्त कथन को ध्यान में रखकर ही देखा–परखा जा सकता है। आज के दौर में भारत एवं पश्चिमी देशों में स्त्री–विमर्श अपने स्वरूप में स्पष्ट नहीं है। इसका एक रूप स्त्री की आजाद सामाजिक बंधनों से पूर्णतः मुक्त ऐसी स्त्री–छवि से है, जो बाजार द्वारा निर्मित है। वे अपनी देह की स्वामिनी हैं और अपनी देह को एक वस्तु के रूप में देखती हैं। ''देह की कांति ने स्त्री को सारे विकल्प उसके पक्ष में नहीं सौंपें हैं। देह के स्वामित्व और देह की छवि से पैसा कमाने की आकांक्षा को बाजार ने अपने हित में भुनाया है। स्त्री की इस स्वतंत्रता को सेक्स उद्योग ने हाथों–हाथ लपक लिया और स्त्री फिर खेल बन गई।

पुरुष ने अपने 'पौरुषीय बदला' के लिए उसी देह का 'विषकन्या' की तरह इस्तेमाल किया और 'हमज़ाद' जैसी रचनाओं का जन्म हुआ। सेक्स शोषण का औजार बनी रही, कुछ रूप बदल कर।''(4)

महादेवी वर्मा ने अपने निबंध 'आधुनिक नारी' उसकी स्थिति पर एक दृष्टि' में पश्चिम में स्त्री के जीवन में हो रहे परिवर्त्तनों को परखते हुए कहा है– ''आधुनिकता की वायु में पली स्त्री का यदि स्वार्थ में केन्द्रित विकसित रूप देखना हो तो हम उसे पश्चिम में देख सकेंगे। स्त्री वहाँ आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र हो चुकी है, अतः सारे सामाजिक बंधनों पर उसका अपेक्षाकृत अधिक प्रभुत्व कहा जा सकता है। उसे पुरुष के मनोविनोद की वस्तु बने रहने की आवश्यकता नहीं है, अतः वह चाहे तो परम्परागत रमणीत्व को तिलांजलि देकर सुखी हो सकती है, परन्तु उसकी स्थिति क्या प्रमाणित कर सकेगी कि वह आदिम नारी की दुर्बलता से रहित है? संभवतः नहीं। शृंगार के इतने संख्यातीत उपकरण, रूप को स्थिर रखने के इतने कृत्रिम साधन, आकर्षित करने के उपहास–योग्य प्रयास आदि क्या इस विषय में कोई संदेह का स्थान रहने देते हैं?''(5)

महादेवी वर्मा की दृष्टि में स्त्री–चेतना का जो रूप है, वह निश्चित रूप से पश्चिम से आयातित स्त्री–विमर्श से सर्वथा भिन्न है, वह विद्रोहिणी होकर भी समाज से विमुख नहीं है। वह मनुष्य के रूप में अपनी उपस्थित की आग्रही है, उसकी आकांक्षा बस इतनी–सी है कि उसे बन्दिनी नहीं अपने प्रियतम की सहचरी का स्थान मिले, सामाजिक रूप से एक ईकाई के रूप में देखा जाए न कि किसी पुरुष की छाया बन कर अपना संपूर्ण जीवन गुजारने के लिए अभिशप्त हो। 'घर और बाहर' शीर्षक निबंध में उन्होंने एक स्त्री की घर की देहरी से लेकर समाज में उसकी सक्रिय भूमिका को स्पष्ट किया है। अपनी इस भूमिका को प्राप्त करने के लिए वह संघर्ष कर रही है और इसमें वह सफल भी हो रही है। भारतीय स्वतंत्रता–संग्राम ही नहीं जीवन के अन्य क्षेत्रों में उनकी संख्या बढ़ रही है। ''वास्तव में स्त्री भी अब केवल रमणी या भार्या नहीं रही, वरन् घर के बाहर भी समाज का एक विशेष अंग तथा महत्त्वपूर्ण नागरिक है, अतः उसका कर्तव्य भी अनेकानेक हो गया है, जिसके पालन में कभी–कभी ऐसे संघर्ष के अवसर आ पड़ते हैं, जिसमें किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाना पड़ता है। वह क्या करे और क्या न करे, उसका कार्य–क्षेत्र केवल घर है या बाहर या दोनों ही, इस समस्या का अब तक कोई समाधान नहीं हो सका है।''(6)

स्त्री–जीवन की समस्याएँ क्या हैं? उसकी वेदना, पीड़ा और व्यथा के मूल कारण क्या हैं? एक स्त्री पुरुष और समाज से क्या चाहती है? इन प्रश्नों का उत्तर बस यही है कि वह एक मनुष्य के रूप में अपनी उपस्थिति की स्वीकृति चाहती है। उसकी पीड़ा और व्यथा का मूल कारण यही है। वह जननी, माता, पत्नी, भगिनी, पुत्री आदि किसी रूप से विरक्त होकर अपनी आजादी नहीं चाहती, परन्तु अपनी इन भूमिकाओं तक ही सीमित जीवन को अपना संपूर्ण जीवन नहीं मानना चाहती। ''पुरुष के समान स्त्री भी कुटुम्ब, समाज, नगर तथा राष्ट्र की विशिष्ट सदस्य है तथा उसकी प्रत्येक क्रिया सबके विकास में बाधा भी डाल सकती है और उनके मार्ग को प्रशस्त भी कर सकता है। प्रायः पुरुष का जीवन अधिक स्वच्छन्द वातावरण में विशिष्ट व्यक्तियों के संसर्ग द्वारा बनता है और स्त्री का संकीर्ण सीमा में परम्परागत रूढ़ियों से जिससे न उसे अपने कुटुम्ब से बाहर किसी वस्तु का अनुभव होता है, न अपने उत्तरदायित्व का ज्ञान। कहीं यह विषमता और कहीं इसकी प्रतिक्रिया जीवन को एक निरर्थक रणक्षेत्र बनाकर उसकी सारी उर्वरता को नष्ट तथा सरसता को शुष्क किये दे रही है।''(7) महादेवी वर्मा के उक्त कथन में ही उनकी स्त्री–चेतना का मूल भाव व्याप्त है।

उनकी काव्य–रचनाओं में स्त्री–चेतना की अभिव्यक्ति वेदना, पीड़ा, व्यथा आदि भावनाओं की ओट में छिपी हुई है। स्त्री जिसे अपना हृदय अर्पित करना चाहती है, उस काम्य पुरुष को जिसे छायावादी शब्दावली में आलोचकों ने 'अज्ञात प्रियतम' कहा है। वह उसकी सहचरी बनकर जीना चाहती है, उसके लिए एक दीपक की भाँति जलकर उसके पथ को आलोकित करना चाहती है। वह सदियों से उसका साथी रहकर भी उसके हृदय से अनुपस्थित है–

''मधुर मधुर मेरे दीपक जल!
युग युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिपल,
प्रियतम का पथ आलोकित कर!
सौरभ फैला विपुल धूप बन,
मृदुल मोम–सा घुल रे, मृदु तन;
दे प्रकाश का सिन्धु अपरिमित,
तेरे जीवन का अणु गल गल!
पुलक–पुलक मेरे दीपक जल!''(8)

स्त्री जिसे व्यथा सुनाना चाहती है, जब उसे ही उसकी व्यथा सुनने का अवकाश नहीं है तो वह क्या करे? अपनी व्यथा किसे सुनाये–

''झिप चलीं पलकें तुम्हारी पर कथा है शेष!
अतल सागर के शयन से,
स्वप्न के मुक्ता–चयन से,
विकल कर तन,
चपल कर मन,
किरण–अंगुलि का मुझे लाया बुला निर्देश!

मौन जग की रागिनी थी,
व्यथित रज उन्मादिनी थी,
हो गया क्षण,
अग्नि के कण,
ज्वार ज्वाला का बना जब प्यास का उन्मेष!''(9)

स्त्री के प्राण आज भी विकल हैं, वह अपने सीमित जीवन के पार देखना चाहती है। अपने जीवन को विस्तार देना चाहती है–

''फिर विकल हैं प्राण मेरे!
तोड़ दो यह क्षितिज मैं भी देख लूँ उस ओर क्या है!
जा रहे जिस पंथ से युग कल्प उसका छोर क्या है?
क्यों मुझे प्राचीर बन कर
आज मेरे श्वास घेरे?
सिन्धु की निःसीमता पर लघु लहर का लास कैसा?
दीप लघु शिर पर धरे आलोक का आकाश कैसा?
दे रही मेरी चिरन्तनता
क्षणों के साथ फेरे!''(10)

युगों से अपनी व्यथा का भार ढोती स्त्री आज भी मुक्त नहीं हो पा रही है। उसकी करुण पुकार की प्रतिध्वनि दिगन्त में व्याप्त है, कोई प्रत्युत्तर नहीं–

''टूटी है कब तेरी समाधि,
झंझा लौटे शत हार–हार;
बह चला दृगों से किन्तु नीर;
सुनकर जलते कण की पुकार,
सुख से विरक्त दुख में समान!
मेरे जीवन का आज मूक,
तेरी छाया से हो मिलाप;
तन मेरी साधकता छू ले,
मन ले करुणा की थाह नाप!

उर में पावस दृग में विहान!''(11)

वह जिसे जगाना चाहती है वह तो बेसुध सोया हुआ है, स्त्री के सारे प्रयत्न व्यर्थ हुए–

''जाग बेसुध जाग!
अश्रुकण से उर सजाया त्याग हीरक–हार,
भीख दुख की मांगने फिर जो गया प्रतिद्वार;
शूल जिसने फूल छू चन्दन किया संताप,
सुन जगाती है उसे सिद्धार्थ की पद–चाप;
करुणा के दुलारे जाग।''(12)

स्त्री अपने प्रियतम को, जिसकी स्मृति धुंधली–सी, अनजान–सी सुधी है, जो उसी में खोया हुआ है, जो उसके मन–प्राणों में ही बसा हुआ है। उस तक वह किस प्रकार अपना संदेश किसके द्वारा कहाँ और किसे पढ़ाये–

''अलि कहाँ सन्देश भेजूँ?
मैं किसे सन्देश भेजूँ?
एक सुधि अनजान उनकी,
दूसरा पहचान मन की,
पुलक का उपहार दूँ या अश्रु–भार अशेष भेजूँ?
चरण चिर पथ के विधाता
उर अथक गति माप पाता,
अमर अपनी खोज का अब पूछने क्या शेष भेजूँ?
नयन–पथ से स्वप्न में मिल,
प्यास में घुल साध में खिल,
प्रिय मुझी में खो गया अब दूत को किस देश भेजूँ!''(13)

स्त्री की व्यथा और वेदना का यह गान उसका एकालाप संवाद नहीं है। इसमें अपने अस्तित्व–प्राप्ति का विकल राग भी व्याप्त है। महादेवी वर्मा अपनी काव्य–रचनाओं में स्त्री–चेतना लिए वह पाठ रचती हैं जिसमें स्त्री–चेतना के बंद कपाट को खोलने का आह्वान है। इसलिए वर्तमान स्त्री–विमर्श के सूत्र उनकी रचनाओं में व्यक्त स्त्री–चेतना से किसी–न–किसी रूप में अवश्य जुड़ जाते हैं।

शिक्षा और आर्थिक स्वाबलंबन का प्रश्न :

आर्थिक रूप से पर निर्भरता भारतीय–स्त्री के जीवन का सबसे कठिन प्रश्न रहा है। आज भी अधिकांश स्त्रियों का जीवन इसी प्रश्न के वलयाकार वृत्त से मुक्त नहीं हो सका है। महादेवी वर्मा ने जिन दिनों स्त्री–जीवन की आर्थिक मुक्ति का स्वप्न देखा था, उन दिनों तो यह स्थिति और भी कठिन थी। विशेष रूप से घरों तक ही सीमित स्त्री शिक्षा और आर्थिक स्वाबलंबन के प्रश्न से स्वयं ही विमुख थी। महादेवी वर्मा स्त्री की दयनीय दशा के लिए अशिक्षा को एक मुख्य कारण मानती हुई कहती हैं– ''शिक्षा के नितांत अभाव और परिस्थितियों की विषमता के कारण कम स्त्रियाँ इस प्रगति को अपना सकीं और जिन्होंने इन बाधाओं से ऊपर उठकर इसे अपनाया भी उन्हें इसका बाह्य रूप ही अधिक आकर्षक लगा। भारतीय स्त्री ने भी अपने आपको पुरुष की प्रतिद्वंद्विता में पूर्ण दिखने की कल्पना की, परन्तु केवल इसी रूप से उसकी चिन्तन नारी–भावना सन्तुष्ट न हो सकी।''(14)

पुरुष–वर्चस्ववादी सोच में पूर्णतः जकड़ी भारतीय–स्त्री सामाजिक रूढ़ियों और परम्परागत संस्कारों के कारण अपने पाँवों की बेड़ी को आभूषण मान बैठी थी। ''एक ओर परम्परागत संस्कार ने उसके हृदय में यह भाव भर दिया कि पुरुष विचार, बुद्धि और शक्ति में उससे श्रेष्ठ है तो दूसरी ओर उसके भीतर की नारी–प्रवृत्ति भी उसे स्थिर नहीं रहने देती। इन्हीं दोनों भावनाओं के बीच में उसे ऐसी आश्चर्यजनक क्षमता का परिचय देना है जो उसे पुरुष के समकक्ष बैठा दे।''(15)

इस कठिन चुनौती को स्वीकार किये बिना स्त्री–जीवन की मुक्ति संभव नहीं है। जिन दिनों महादेवी वर्मा ने स्त्री–प्रश्नों को केन्द्र में रखकर शृंखला की कड़ियाँ के निबंधों को लिखा, उन दिनों स्त्री–शिक्षा की दशा कितनी बदहाल थी, इसे उनके व्यक्त विचार से समझा जा सकता है– ''शिक्षा की दृष्टि से स्त्रियों में दो प्रतिशत भी साक्षर नहीं है। प्रथम तो माता–पिता कन्या की शिक्षा के लिए कुछ व्यय ही नहीं करना चाहते, दूसरे यदि करते भी हैं तो विवाह की हाट में उनका मूल्य बढ़ाने के लिए, कुछ उनके विकास के लिए नहीं।''(16)

निष्कर्ष :

महादेवी जी की काव्य–रचनाओं पर सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों का प्रभाव पड़ा था। कविताएँ तो रचनाकार की भाव–संपदा से सृजित होती हैं, परन्तु विचार के क्षणों में रचनाकार अपने आस–पास के जीवन और समाज को जिन अभावों से ग्रस्त पाता है, उन विषम परिस्थितियों पर विमर्श की मनःस्थिति में निबंधादि की भी रचना करता है। महादेवी जी ने इन्हीं क्षणों में स्त्री–जीवन की दयनीय जीवनावस्था में उनकी आर्थिक परनिर्भरता पर विचार करते हुए स्त्री–समस्याओं पर केन्द्रित 'स्त्री के अर्थ–स्वातंत्र्य का प्रश्न' शीर्षक निबंध दो खण्डों में लिखा जो उनकी 'शृंखला की कड़ियाँ' में संकलित हैं।

संदर्भ–ग्रंथ :

1. शृंखला की कड़ियाँ– महादेवी वर्मा, पृष्ठ–9
2. शृंखला की कड़ियाँ– महादेवी वर्मा, पृष्ठ–14
3. वही, पृष्ठ–12
4. स्त्री : मुक्ति का सपना– संपादक अरविंद जैनः लीलाधर मंडलोई पृष्ठ–111
5. शृंखला की कड़ियाँ – महादेवी वर्मा, पृष्ठ–44–45
6. शृंखला की कड़ियाँ – महादेवी वर्मा, पृष्ठ–56
7. वहीं, पृष्ठ– 19
8. नीरजा– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 20
9. दीपशिखा– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 74
10. सांध्यगीत– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 51
11. सन्धिनी– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 103
12. सन्धिनी– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 83
13. सन्धिनी– महादेवी वर्मा, पृष्ठ– 125
14. शृंखला की कड़ियाँ – महादेवी वर्मा, पृष्ठ–47
15. वही, पृष्ठ– 47–48
16. शृंखला की कड़ियाँ – महादेवी वर्मा, पृष्ठ–85